संपादकीय

वर्तमान वैश्विक अंग्रेजी कैलेंडर के अनुसार नववर्ष का प्रवेशांक आपके हाथों में है , हालांकि अलग-अलग समुदाय अपनी मान्यताओं तथा परंपराओं के अनुसार अलग-अलग समय नववर्ष मनाते हैं। हिब्रू मत के अनुसार नववर्ष ग्रेगरी कैलेंडर में 5 सितंबर से 5 अक्टूबर के बीच कहीं पड़ता है, इस्लामी कैलेंडर पूर्णतः चंद्र कलाओं पर आधारित है तथा इसके नववर्ष की तिथियां भी परिवर्तित होती रहती हैं। भारत के पंजाब में नववर्ष बैसाखी उत्सव के रूप में 13 अप्रैल को मनाया जाता है, जबकि नानकशाही कैलेंडर के अनुसार 13 मार्च से नववर्ष प्रारंभ होता है। तमिलनाडु में 15 जनवरी को पोंगल त्योहार के रूप में नए साल का पर्व मनाते हैं। आंध्रप्रदेश तथा कर्नाटक के क्षेत्रों में चैत्र मास से युगादि उत्सव के साथ नववर्ष प्रारंभ माना जाता है। वहीं सिंधी समुदाय चेटीचंड तथा महाराष्ट्र में इसे गुड़ीपड़वा पर्व के नाम से नववर्ष उत्सव मनाते हैं। बंगाली नववर्ष प्रथम वैशाख 14-15 अप्रैल को आता है। मारवाड़ में दिवाली के दिन नववर्ष मनाते हैं, जबकि गुजरात में दिवाली के दूसरे दिन से नया साल प्रारंभ मानते हैं। वैसे हिंदू मान्यताओं के अनुसार चैत्र प्रतिपदा से नववर्ष प्रारंभ माना जाता है इसे मधुमास भी कहते हैं तथा इस महीने को साक्षात विष्णु का महीना भी माना जाता है। विक्रमी संवत भी इसी दिन से शुरू होता है। वस्तुतः इस उत्सव का संबंध प्रकृति परिवर्तन तथा किसानों की खेती के कैलेंडर से सीधे रूप से जुड़ा हुआ है। इस समय प्रायः जलवायु तथा प्रकृति सर्वाधिक समृद्ध तथा मनोहारी स्वरूप में होती है। इन दिनों ना तो बरसात का सर्वत्र व्याप्त कीचड़ होता है और ना ही गर्मियों की धूल की आंधियां। जंगल हों या बाग-बगीचे सभी जगह पेड़-पौधे आपस में मानो प्रतिस्पर्धा करते हुए नव-पल्लव, फूलों और मंजरियों से लद जाते हैं। नदी-नाले तालाबों में बरसात की गाद बैठ जाती है और जल निर्मल हो जाता है। किसानों की साल भर की कमाई खलिहानों में सुरक्षित पहुंच जाती है। उत्सव के लिए इससे बेहतर और वातावरण भला क्या हो सकता है। किंतु वर्तमान में भौतिकवाद की मार से हमारे लोकरंजन के इन प्रकृति पर्वों की आभा और इनमें निहित जीवन रस निरंतर छीजता जा रहा है। दूसरी तरफ वैश्विक बाजारवाद ने हमारे त्यौहारों- पर्वों का पूरी तरह से बाजारीकरण कर दिया है। सो आज इन लोक पर्वों- त्यौहारों की मूल आत्मा पूरी तरह नदारद है, और यह केवल औपचारिकता, दिखावा और भोगवाद का उत्स बन कर रह गए हैं।

साक्षात्कार

समय के साथ साहित्य का मिज़ाज बदलता रहता है

वरिष्ठ रचनाकार **हयात रज़वी** से **राजाराम त्रिपाठी** की बातचीत

प्र. आपका लेखन की ओर रुझान कैसे हुआ?

उ. सन् साठ के दशक तक मैं लेख या लघुकथाएं ही लिखता था। बाद में कहानियां लिखने लगा और वह उस समय इंदौर से निकलने वाली मासिक पत्रिका 'उषा' में प्रकाशित होने लगीं। कांकेर जैसी छोटी रियासती बस्ती में, यह बात बहुत चर्चित हुई।

प्र. आप ने ग़ज़ल के अलावा और किन-किन विधाओं में हाथ आज़माया है?

हयात रज़वी और डॉ. राजाराम त्रिपाठी